The Indian Journal of Basic and Applied Research
Volume 1 |Issue 1| June 2015
Online & print@ www.ijbar.co.in

राष्ट्र–ऋषि का बलिदान होना

अजीत प्रताप सिंह[1]
काशी हिन्दू विश्वविद्यालय वाराणासी
ajeetpsc@gmail.com

"शासन कौन चलाये, यह तो एक बार बहुमत और चुनाव से तय हो सकता है, परन्तु सत्य क्या है, यह कभी बहुमत से तय नही होता। राजा कौन बनेगा, यह बहुमत से तय होता है, पर राजा क्या करेगा, यह धर्म से तय होता है।"

11फरवरी, 1968 की प्रातः मुगलसराय स्टेशन की रेल पटरियों से सटा पडा भारतीय जनसंघ के अध्यक्ष पं• दीनदयाल उपाध्याय जी का शव पाया गया। संयोगवश राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आरएसएस) के द्वितीय सर संघचालक परमपूज्य श्री मा• स• गोलवलकर जी (श्रीगुरूजी) उस समय बनारस में ही थे, वे पोस्टमार्टम के स्थान पर पं• दीनदयाल जी के शव का दर्शन करने पहुँचे। श्रीगुरूजी दीनदयाल जी को बहुत मानने थे। उनके मुंह से अनायास ही शब्द निकल पडे **"तुम तो नहीं रहे, तुम्हारे एकात्म मानव दर्शन का क्या होगा।"**

दीनदयाल जी की बहुमुखी प्रतिभा के कारण उनके विषय में कुछ भी कहना उनका एकपक्षीय व आंशिक विवरण होगा। अति सामान्य दिखने वाले इस महापुरूष मे समाज चिंतक, अर्थचिंतक, शिक्षाविद्, राजनीतिज्ञ, लेखक, पत्रकार, वक्ता, संगठन शास्त्री आदि की कितनी ही प्रतिभाएं समाहित थीं। 1937 में कानपुर मे सनातन धर्म कालेज मे बीए के दौरान उनका परिचय आरएसएस से हुआ। श्री भाऊराव जी देवरस से परिचय के बाद उन्होने राष्ट्र समर्पित जीवन जीने का व्रत अर्थात प्रचारक जीवन अंगीकार कर लिया।

श्रीगुरूजी की सलाह पर दीनदयाल जी का राजनीति मे जाना तथा एकात्ममानव दर्शन का प्रर्वतन करना, यह उनका अपने दायित्व के प्रवाह मे बहना तथा राष्ट्र के प्रति सर्मपण था। आजादी मिलने के कुछ माह बाद गाँधी जी की हत्या तथा उसके बाद देश की नेहरू–सरकार का नाटकीय रूप से आरएसएस पर प्रतिबन्ध लगाना व हटाना और उस समय राजनीतिक सत्ता के घृणित व्यवहार के कारण आरएसएस को ऐसा महसूस हुआ कि उसके पक्ष मे दो टूक बात कहने वाले लोग भी संसद और विधानसभा मे होने चाहिए। उसी समय नेहरू–सरकार की मंत्रिमण्डल के सदस्य डॉ• श्यामाप्रसाद मुखर्जी सरकार की नीतिगत वैचारिक मतभेद के कारण मंत्रिमण्डल से त्यागपत्र देने के बाद राजनीतिक दल का गठन करने के उददेश्य से श्रीगुरूजी से मिले। वैचारिक रूप से एकमत होने के कारण श्रीगुरूजी ने दीनदयाल जी को राजनीति मे भेजा, तब दीनदयाल जी ने 21सितम्बर, 1951 को लखनऊ मे प्रादेशिक सम्मेलन बुलाकर प्रदेश जनसंघ की स्थापना की। श्रीगुरूजी ने दीनदयाल जी को राजनीति मे भेजने के साथ ही उनसे पूँजीवादी और समाजवादी व्यवस्था के इतर एक ऐसी व्यवस्था का विकल्प खोजने को कहा जो पूर्णतया भारतीय संस्कृति के अनुरूप हो। दीनदयाल जी ने यह कार्य भी एकात्ममानव दर्शन देकर पूर्ण किया।

इस दर्शन मे प्राचीन परम्पराओं, मूल्यों और अवधारणाओं की नवीन दृष्टि से व्याख्या करते हुए नवीन परम्पराओं, मूल्यों और अवधारणाओं का सम्प्रेषण विश्व समुदाय के साथ किया गया है। श्रीगुरूजी ने इसे "सामाजिक संजीवनी" कहा था, तथा इन्दुमति काटदरे जी का कहना है कि एकात्ममानव दर्शन के रूप मे दीनदयाल जी ने ऐसा चिन्तन प्रस्तुत किया जिसके अनुसार शाश्वत तत्वों के आधार पर वर्तमान मे क्रियान्वयन की योजना बन सके।

दीनदयाल जी के अनुसार "एकात्म मानव दर्शन भारतीय संस्कृति का जीवन दर्शन है। भारतीय संस्कृति एकात्मवादी है, अतः शरीर, मन, बुद्धि, एवं आत्मा से युक्त धर्म, अर्थ, काम एवं मोक्ष के चतुर्विध

पुरूषार्थों की साधना करने वाला, और एक ही साथ परिवार, जाति, राष्ट्र एवं मानव–समाज आदि विविध एकात्म समष्टियों का प्रतिनिधित्व करने की क्षमता रखने वाला मानव इस दर्शन का केन्द्र–बिन्दु है।" विकास के विषय पर उनका कहना था कि "राष्ट्रों, मनुष्यों या पदार्थों के सम्बन्ध या उनका विकास संघर्ष से या स्पर्धा से नही होता, उनका आधार समन्वय ही होता है। समन्वय का मूल आधार एकात्मकता ही है।"

काल के प्रबल प्रवाह नेतृत्व की ढलती क्षमता, अनेक विदेशी आक्रमणों व गुलामी के कारण समाज में अंतर्निहित एकात्मकता की भावना पर लगातार प्रहार होते रहे हैं। चराचर मे आत्म–तत्व के बोध की जीवन दृष्टि भी कमजोर पडती गई, फलस्वरूप समाज मे विघटन, अशांति, अनाचार और आपसी कलह बढ रही है। देश की आजादी के बाद देश की रीति और नीति मे अन्तर के कारण भी अनेक समस्याओं का सामना समाज को करना पड रहा है, जैसे भारतीय राजनीतिज्ञों की सबसे बडी गलती यह थी कि वे देश के भिन्न–भिन्न वर्गों का स्वतंत्र अस्तित्व मानकर चलते हैं। स्वतंत्र अस्तित्व मानकर उन सब वर्गों का उपयोग राष्ट्रहित के लिए करने का प्रयत्न करते हैं। वस्तुतः राष्ट्रीयता के स्तर पर उनका स्वतंत्र अस्तित्व को मानना एक बडी गलती है। इसी प्रकार यह गलती भाषा तथा आर्थिक आधारों पर भी हुई है। प्रत्येक अलग वर्ग का तुष्टीकरण करने का प्रयास करना मिथ्या राजनीति बनी है, जबकि समूचा भारत एक है। भारत की जनता एक है। इस एकता का अनुभव प्रत्येक भारतीय को होना चाहिए। अवयव जोडकर शरीर नही बनता, अवयव शरीर के अभिन्न अंग हैं। स्वाभाविक रूप से अवयव स्वतः के लिए प्रयत्नशील रहते हैं, ऐसा एकात्म भाव राजनीति की आधारशिला बननी चाहिए। जब तक एकात्म भाव की नीव पर राष्ट्र की राजनीति खडी नही होगी, तब तक समाज और व्यक्ति के हित का सही मार्गदर्शन होना संभव नही है। दीनदयाल जी के विचार ऐसे एक सुदृढ समाज और देश की और बढने का प्रयास थे।

पश्चिम का पूँजीवाद और रूस–चीन का साम्यवाद समान रूप से लोकतंत्र के प्रतिकूल है और भारत की सरकारें इन्ही झूलों मे झूल रही हैं। लोकतंत्र के मूलभूत आधार को समझने का हमारे शासकों ने प्रयास ही नही किया। वे केवल सत्ता–संघर्ष मे ही लगे हुए हैं। इस समस्या का हल दीनदयाल जी के अनुसार शासन कौन चलाये, यह तो एक बार बहुमत और चुनाव से तय हो सकता है, परन्तु सत्य क्या है, यह कभी बहुमत से तय नही होता। राजा कौन बनेगा, यह बहुमत से तय होता है, पर राजा क्या करेगा, यह धर्म से तय होता है।

दीनदयाल जी के अनुसार ये सभी विचारधाराएँ मानव को हाड–माँस का बना हुआ, त्रिविधगुण सम्पन्न, इच्छा, आकांक्षाओं वाला जीवित प्राणी न मानकर उसके किसी भाव–स्वरूप की कल्पना लेकर ही अपनी रचना करती है। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का विचार लेकर चलने वाले प्रजातन्त्र ने यदि एक "अर्थ–मानव" की सृष्टि की, तो साम्यवाद ने एक "सामान्य जन" की उत्पत्ति की। यह सामान्य जन भगवान की सृष्टि नही, बल्कि राज्य द्वारा रचा जाता है। राज्य ही उसके सम्पूर्ण विचारों, भावनाओं, क्रियाओं और आदर्शों का विधान करता है, और उसके बदले मे उसे एक मशीन–मानव की सुरक्षा प्राप्त होती है।

दीनदयाल जी हिन्दू राष्ट्र जीवन के महान भाष्यकार थे। जीवन पर्यन्त उनके मुख व लेखनी से निकले प्रत्येक शब्द ने भारत की राष्ट्रीय भावना का उद्‌गार किया है। उन्होने व्यक्ति और समाज, स्वदेश और स्वधर्म, परम्परा तथा संस्कृति जैसे विषय पर गहन अध्ययन व चिन्तन मनन किया है। विकेन्द्रीकरण के विषय पर उन्होने भारतीय अर्थनीति–विकास की एक दिशा मे लिखा है, कि जैसे एक स्थान पर आर्थिक तथा सामाजिक शक्ति का केन्द्रीकरण प्रजातंत्र के विरूद्ध है, वैसे ही एक ही व्यक्ति के संस्था के पास राजनीतिक, आर्थिक तथा सामाजिक शक्ति का केन्द्रीकरण लोकतंत्र के मार्ग में बाधक है। साधारणतया तो जब किसी भी एक क्षेत्र की शक्ति केन्द्रित हो जाती है, तो केन्द्रस्थ व्यक्ति प्रत्यक्ष

या अप्रत्यक्ष रीति से अन्य क्षेत्रों की शक्ति भी अपने हाथ मे लेने का प्रयास करते हैं। इसमे से ही खिलाफत और कम्युनिस्टों की तानाशाही सरकारें पैदा हुई है।

दीनदयाल जी ने सामाज को केन्द्र मे रखकर भारतीय संस्कृति को आधार बनाकर मानवीय मूल्य के लिए समग्रता की दृष्टि और आधुनिक व्यवहारिक विचारों के साथ व्यक्ति, समाज, राष्ट्र और समष्टि के विकास के लिए एकात्म–अर्थनीति और एकात्म–राजनीति पर विचार दिये। उनके विचारों को इस लेख में लिपिबद्ध करना सम्भव नहीं है। उनके विषय पर "पॉलिटिकल डायरी" पुस्तक के लोकार्पण के दौरान श्रीगुरूजी दीनदयाल जी के साथ अपने संबन्ध के विषय कहा था, कि अपने देश के एक अति श्रेष्ठ पुरूष के विषय मे ऐसा कहा जाता है, कि एकबार एक बृद्ध सज्जन से मिलने गए। वे श्रेष्ठ पुरूष देश के मान्यता प्राप्त, बहुत प्रसिद्ध जनसाधारण के नेता थे, भेंट होते ही उन्होने उक्त बृद्ध सज्जन को अतीव नम्रमापूर्वक प्रणाम किया। जब लोगों ने पूछा, तो उन्होने बताया कि वे बृद्ध सज्जन प्राथमिक शाला मे उनके गुरू थे। उन्होने ही पढाया और आशीर्वाद दिया कि बुद्धिमान बनो। उन्ही के आशीर्वाद से वे बडे बने हैं। वे आध्यापक जानते थे कि उनकी योग्यता केवल प्राथमिक शाला में पढाने की थी और श्रेष्ठ पुरूष जितने विद्वान् हुए, जितनी श्रेष्ठता उन्होने प्राप्त की, उतनी विद्वता, श्रेष्ठता प्रदान करने की क्षमता उनके अंदर नही थी। मेरा भी दीनदयाल से जो कुछ संबंध आया, वह उस प्राथमिक शाला के शिक्षक के रूप मे ही समझना चाहिए, उससे अधिक नही।

आरएसएस के चौथे सर संघचालक परमपूज्य श्री प्रो• राजेन्द्र सिंह जी (रज्जू भैया) ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि "एक बार फैजाबाद में आईटीसी के समारोह में उन्हें (दीनदयाल जी) बुलाया गया था, तो उनके पास एक भी साफ धुली हुई धोती नही थी। मैने धोती देखकर कहा कि यह अच्छी नहीं है तो उन्होने दूसरी उससे भी गंदी निकाल कर दिखा दी और कहा क्या इसको पहन लूँ? अंत में उन्होने कहा कि लोग मेरा भाषण सुनने आएँगे, मेरी धोती देखने थोडे ही आएँगें।" सांस्कृतिक राष्ट्रवाद की वैचारिक आत्मा वाले राष्ट्र–ऋषि दीनदयाल जी का यह रूप प्रचारक के सफर से शुरू होकर जीवन के अन्त तक बना रहा। वर्तमान विकृत राजनीतिक वातावरण मे यह बात शायद ही कोई विश्वास करे, कि एक राजनीतिक दल के राष्ट्रीय अध्यक्ष का मृत शरीर 11फरवरी, 1968 को जब मुगलसराय स्टेशन पर मिला, तब उनकी धोती कई स्थान पर सिली हुई थी।

यह एक सुखद संयोग ही है, कि इस वर्ष राष्ट्र–निर्माण के इस तपस्वी के एकात्म–मानव दर्शन के 50 वर्ष पूरे हुए हैं। यह उसकी स्वर्णजयंती का साल है। इसके साथ ही अगले साल दीनदयाल जी का जन्म शताब्दी वर्ष भी प्रारंभ होगा। 11फरवरी उस तपस्वी का महाप्राणावसान ही नही था, बल्कि आज यह राष्ट्र के लिए बलिदान दिवस है।

('लेखक काशी हिन्दू विश्वविद्यालय मे शोधार्थी हैं)